।। श्रीविश्वनाथो जयति ।।

धर्म-प्रश्नोत्तरी

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित ।

काशी
सम्वत् १९८६ विक्रमीय ।

चतुर्थावृत्ति सं. २०७२, २०१५ ई.   मूल्य-१०/-

।। श्रीविश्वनाथो जयति ।।

धर्म-प्रश्नोत्तरी

श्रीस्वामी दयानन्द विरचित ।

काशी ।
सम्वत् १९८६ विक्रमीय ।

चतुर्थावृत्ति वि. २०७२ सन् २०१५ ई०

प्रकाशक
श्री भारतधर्म महामण्डल
महर्षि ज्ञानानन्द मार्ग, लहुराबीर
वाराणसी

प्रथम संस्करण वि.सं. १९८३

चतुर्थ संस्करण २०१५ ई.

मूल्य : दस रुपया मात्र

मुद्रक
मयंक प्रेस
आर्य समाज की गली
बुलानाला, वाराणसी

प्रस्तावना

श्रीभगवान् मनु जी ने कहा है, कि "नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयात्" अर्थात बिना प्रश्न किये किसी को शास्त्र नहीं कहना चाहिये। इस अनुशासन वचन के अनुसार प्राचीन पुराणादि शास्त्रों में तथा धार्मिक जनसमुदाय में प्रश्नोत्तर द्वारा शास्त्रचर्चा, धर्मचर्चा तथा शास्त्रार्थ निर्णय की विधि आर्य्यजाति के भीतर चिरकाल से प्रचलित है। यह विधि बहुत ही उत्तम तथा सुफलप्रद है, क्योंकि प्रश्न के द्वारा ही जिज्ञासुका शास्त्रीय अधिकार, आध्यात्मिक स्थिति तथा शङ्काका सच्चा निदान उत्तरदाता को ज्ञात हो सकता है, इसी कारण प्राचीन ऋषि-काल में अपनी ओर से अजिज्ञासितरूपसे शास्त्रव्याख्या या शास्त्रीय भाषण न करके शिष्य या जिज्ञासुओं के द्वारा विनीत भाव से पूछे जाने पर ही आत्मतत्त्व, धर्मतत्त्व या शास्त्रतत्त्व निरूपण की परिपाटी प्रचलित थी। अब काल प्रभाव से तथा धर्म जिज्ञासुओं के अभाव से यह उत्तम परिपाटी दिन ब दिन लुप्त हो चली है।

अनुसन्धित्सा ज्ञानराज्यमें प्रवेशका प्रथम लक्षण है। इस कारण उन्नति पथके पथिक बालक सम्भवतः अनुसन्धान प्रिय होते हैं। माता-पिता, भाई, गुरुजन सभी से बालक "यह क्या है, वह क्यों ऐसा है" इस प्रकार से पूछकर संसार की अनेक वस्तुओं को जानना चाहते हैं। जिस बालक में इस प्रकार की अनुसन्धित्सा अधिक हो, जानना चाहिये कि भविष्यत् में ज्ञानराज्य में भी उसका अधिकतर अधिकार होगा। अतः संसार के अन्यान्य विषयों में अनुसन्धित्साके साथ ही साथ धर्मराज्यमें भी हिन्दूबालकोंकी अनुसन्धित्सा स्वाभाविक है। इसी कारण प्रश्नोत्तररूपसे आर्य्यशास्त्रके कुछ विषयोंके संक्षेप परिज्ञानके लिये यह धर्म प्रश्नोत्तरी प्रकाशित की जाती है। इसमें संक्षेप तथा अति सरलरूप से आर्य्यशास्त्रकी प्रथम शिक्षोपयोगी अनेक बातें बताई गई हैं। सनातन धर्मके लक्षण, आचारके लक्षण, धर्माङ्ग वर्णन, परमात्माका स्वरूप, ऋषि-देवता-पितरोंके लक्षण, वेद, स्मृति, पुराणादिके लक्षण, उपासना-लक्षण, अवतारतत्त्व, वर्णाश्रमधर्म-लक्षण, मूर्त्ति-पूजा, श्राद्ध, राजधर्म, प्रजाधर्म,

आर्य्यजाति के लक्षण, मनुष्य जीवन का कर्त्तव्य इत्यादि इत्यादि अनेक विषय प्रश्न तथा उत्तर रूपसे इन ग्रन्थमें दिये गये हैं, जिनके पाठ तथा अभ्यास करने से कोमलमति बालकगण बहुत ही लाभवान् होंगे, इसमें सन्देह नहीं। उत्तर रूप से वर्णित धर्म आदिके लक्षणोंको यदि अध्यापकगण उन्हें कण्ठस्थ करा देवें, तो और भी अच्छा होगा।

यह ग्रन्थ अति सरल है, इसलिये धार्मिक पाठ्य-पुस्तक श्रेणी में प्रथम पुस्तक 'सदाचारसोपान' के बाद ही यह पढ़ने योग्य है। इसके अभ्यास के बाद धर्मसोपान, चरित्र-चन्द्रिका, नीतिचन्द्रिका, आचारचन्द्रिका आदि पुस्तकें धर्मशिक्षार्थ बालकगण पढ़ सकते हैं।

नियमानुसार इस पुस्तक का भी स्वत्वाधिकार दीन, दरिद्र, दुःखियों के सहायतार्थ श्रीभारतधर्ममहामण्डल द्वारा स्थापित श्री विश्वनाथ अन्नपूर्णा दान भण्डारको समर्पित किया गया है।

काशीधाम
रामनवमी
सं.-१९८६

निवेदक
श्रीकवीन्द्रनारायण सिंह
प्रधानाध्यक्ष श्रीभारतधर्ममहामण्डल

प्रकाशकीय निवेदन

भारत में वैदिक कालसे चली आयी ऋषियों और महर्षियोंकी महान परम्परामें बीसवीं सदी में ऐसी ही एक महान विभूति थे ब्रह्मर्षि ज्ञानानन्दजी । उन्होंने आर्यधर्मके उद्धार तथा सनातन धर्मके मूल्यों, परम्पराओं तथा सिद्धान्तोंकी प्रतिष्ठापनाके लिए देशभरमें फैले धर्ममण्डलोंको एकीकृत करके श्रीभारतधर्म महामण्डलकी प्रतिष्ठापना कर बीसवीं सदीके प्रारम्भिक दशक में इसे काशी जैसी धर्मभूमिमें संस्थापित कर दिया ।

देशभरके राजाओं, महाराजाओं तथा धर्मप्राण आस्तिकजनोंने उनके इस सद्प्रयास से प्रभावित होकर सनातन धर्मके उद्धार तथा विकास के लिए मुक्तहस्तसे दान दिया । अपने जीवनकालमें ही स्वामीजीने सम्पूर्ण दाननिराशिसे श्रीविश्वेश्वर न्यास, श्रीमहामाया न्यास, श्रीवेणीमाधवपुर न्यास आदि का गठन किया जिनके आर्थिक सहयोग से श्रीभारत धर्म महामण्डल सनातन धर्मके प्रचार, प्रसार, उन्नयन, शास्त्रोंके प्रकाशन, गोवंशकी रक्षा तथा वर्णाश्रम व्यवस्थाकी स्थापना हेतु सतत् कार्य कर सके । इसी उद्देश्यसे श्री आर्यमहिला हितकारिणी महापरिषद की स्थापना नारी शिक्षा के उन्नयन हेतु की ।

श्रीभारतधर्म महामण्डल द्वारा अमूल्य ग्रंथोंका प्रकाशन उनकी ही प्रेरणा तथा दिशानिर्देशसे निरन्तर किया जाता रहा है । अनेक सद्ग्रन्थोंके नये संस्करण निकालनेका कार्य प्रारम्भ किया गया है । यह पुस्तिका सामान्यजनों को सरल तथा सहज रूप से सनातन धर्म तथा वर्णाश्रम व्यवस्था की प्रारम्भिक जानकारी प्रदान करने की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है इसलिए नये संस्करणों का प्रकाशन इसी सद्पुस्तक से करने का निर्णय लिया गया ।

यह पुस्तिका सभी सनातनधर्मी नागरिकों के पास रहे और जो धार्मिकजन और श्रद्धालु इसका वितरण अपने सामर्थ्यसे कर सकें उनकी सुविधाके लिए सस्ते लागत मूल्यपर प्रकाशन किया जा रहा है । हमारा उद्देश्य व्यापारिक नहीं है न इसके माध्यम से मुनाफा कमाना ही है । मुझे विश्वास है कि सनातनधर्मावलम्बी इस पुस्तिकाका स्वागत करेंगे । सभी न्यासों का सहयोग हेतु महामण्डल आभार व्यक्त करता है।

धर्मशील चतुर्वेदी
चीफ सेक्रेटरी
श्रीभारतधर्म महामण्डल, लहुराबीर

वि. २०७२
२०१५ ई.

श्री विश्वनाथो जयति

धर्म-प्रश्नोत्तरी

प्रश्न-सनातन धर्म किसको कहते हैं ?

उत्तर-जो धर्म सदासे आर्य्यजातिके भीतर चला आता है, जिसको ऋषियोंने वेद, स्मृति, पुराण आदिके द्वारा हमें बताया है, जो धर्म हमको पाप करनेसे या नीचे गिरनेसे बचाता है और इहलोक तथा परलोकमें हमारी सब तरहकी उन्नति करता हुआ अन्तमें श्री भगवान्‌के चरणोंमें हमें पहुंचाता है, उसीका नाम सनातन धर्म है। सनातन धर्म अनादिकालसे है और अनन्तकाल तक रहेगा, इसका नाश कभी नहीं हो सकता, इसीलिये इसका नाम 'सनातन' है । इस पृथ्वीमें छोटे-मोटे कितने ही धर्म उत्पन्न होते हैं और कुछ वर्षोंके बाद नष्ट हो जाते हैं, किन्तु सनातन धर्म अजर-अमर है, क्योंकि इसको किसीने उत्पन्न नहीं किया है जिसका जन्म होता है, उसकी मृत्यु भी होती है । सनातन धर्म का कभी जन्म नहीं हुआ है, इसलिये इसकी मृत्यु भी हो नहीं सकती । यह धर्म श्री भगवान्‌की शक्ति है, इस कारण जैसे भगवान् नित्य हैं, वैसा सनातन धर्म भी नित्य है ।

प्रश्न-सनातन धर्म के कितने अङ्ग हैं ?

उत्तर-सनातनधर्म के प्रधान तीन अङ्ग हैं, यथा- यज्ञ, दान और तप । यज्ञ के तीन भेद हैं, यथा-कर्मयज्ञ, उपासना यज्ञ और ज्ञान यज्ञ । कर्म के छः भेद हैं यथा- नित्यकर्म, नैमित्तिककर्म, काम्यकर्म, अध्यात्मकर्म, अधिदैवकर्म और अधिभूतकर्म । उपासनायज्ञके नव भेद हैं, यथा-निर्गुणब्रह्मोपासना ईश्वरोपासना, अवतारोपासना, ऋषि देवता-पितरोंकी उपासना, भूत-प्रेतकी उपासना, मन्त्रयोग, हठयोग, लययोग और राजयोग । ज्ञानयज्ञके तीन भेद हैं यथा-श्रवण, मनन, निदिध्यासन । इस तरहसे यज्ञके कुल १८ भेद, दानके तीन भेद हैं, यथा-अर्थदान, विद्यादान और अभयदान । तपके भी तीन भेद हैं, यथा शारीरिक तप, वाचनिक तप और मानसिक तप । अत: यज्ञके १८ भेद, दान के ३ भेद और तपके तीन भेद कुल मिलाकर धर्म के २४ अङ्ग हुए । सत्त्वगुण रजोगुण और तमोगुण इन तीन गुणोंके हिसाबसे हरेक अङ्ग तीन तीन होते हैं

इसलिए सनातनधर्म के सब समेत ७२ अंङ्ग हैं। इसके अहिंसा, क्षमा, दया, सत्य, अक्रोध आदि उपांग अनन्त हैं।

प्रश्न-यज्ञ, दान और तप के लक्षण क्या क्या हैं ?

उत्तर-अपनी या दूसरेकी सच्ची उन्नतिके लिये जो कुछ बड़ा कार्य किया जाय उसीको यज्ञ कहते हैं। भगवान्‌की पूजा, देवताओंकी पूजा, देशकी सेवा, जीवसेवा ये सब ही यज्ञ कहलाते हैं। धन, भूमि, विद्या आदि सुपात्र देखकर दे देनेका नाम दान है। दानमें पात्र जितना अच्छा होता है, दानका फल भी उतना ही अच्छा होता है। कुपात्रमें दान देनेसे कभी कभी उलटा फल भी होता है। शरीर, मन, आदिके रोकनेको तप कहते हैं। सर्दी, गर्मी, वगैरह सह लेना, शरीरको नाजुक न बनाकर कष्ट सहने लायक बनाना, इन्द्रिय तथा मनको क्रोध, लोभ आदिके वेग से अलग रखना या बुरी चिन्ता मनमें न होने देना, मिथ्या बोलना, अण्ड-बण्ड बोलना- दूसरेको कड़ी बात कहना आदिसे बचन को रोकना, ये सब शारीरिक, मानसिक तथा वाचनिक तपके लक्षण हैं। यज्ञ, दान और तप इन तीनोंके करने से बड़ी शक्ति मिलती है, शरीर और मन बड़ा अच्छा रहता है और भगवान्‌की प्रसन्नता प्राप्त होने से सारा जीवन सुख से कटता है।

प्रश्न-धर्म करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर-धर्म करनेसे शरीर, मन, बुद्धि, सभी अच्छा रहता है, संसार में किसी वस्तुका अभाव नहीं रहता है, समस्त जीवन बड़े ही आनन्द तथा शान्ति से कटता है और कभी पापकी ओर जानेकी इच्छा नहीं होती। धार्मिक मनुष्य धर्मके ही बलसे मरनेके समय भी कोई कष्ट नहीं पाते और मृत्युके बाद परलोकमें तथा स्वर्ग आदि उन्नत लोकोंमें बहुत ही आनन्द लाभ करते हैं। यहां तक कि धर्मके बलसे मनुष्य इन्द्र, वरुण, यम आदि देवता भी बन सकता है। जिसके हृदयमें धर्म है उसके हृदयमें भगवान् बसते हैं, धार्मिक मनुष्य पर नारायणकी सदा ही कृपा रहती है और उसी कृपाके फलसे वह लगातार उन्नति करता हुआ अन्तमें श्रीभगवान्‌को ही पा लेता है, जिससे उसके आनन्दकी सीमा नहीं रहती।

प्रश्न-पहला धर्म क्या है ?

उत्तर-आचार। खाना, पीना, सोना, जागना, बैठना, उठना आदि शरीरका सभी कार्य यदि धर्मके साथ किया जाय जिससे शरीर, मन, आत्मा सभीकी उन्नति हो

तो उसे आचार कहते हैं। संसारमें ऐसी अनेक चीजें हैं जिनके खाने से शरीर मन, सभी बिगड़ते हैं और ऐसी भी बहुत चीजें हैं जिनके खानेसे शरीर, मन, बुद्धि सभी उन्नत होते हैं। जैसा कि प्याज, लहसुन, मांस आदिके खानेसे शरीर, मन आदि बिगड़ते हैं और गोदुग्ध, घृत, निरामिष शाक, चावल आदिके खानेसे शरीर, मन सभीमें सत्त्वगुण बढ़ता है। इसलिये खाने पीनेमें ऐसा विचार रखकर अच्छी चीजोंको ग्रहण करना और बुरी चीजोंको त्याग करना ये सब आचार कहलाते हैं। इस प्रकारसे स्नान करनेके समय भी समझना चाहिये कि, हमें भगवान्‌की पूजा करना है, पूजा पवित्र शरीरसे अच्छी होती है, इस कारण शरीरको पवित्र करनेके लिये हम स्नान करते है, चलना फिरना, शौच, स्नान, निद्रा, गुरुजनोंकी पूजा, भगवान्‌की पूजा आदि सभी कार्योंमें ऐसा धार्मिक विचार रखने पर सदाचार-पालन होता है। सदाचारके पालनेसे आयु बढ़ती है, शरीर निरोग रहता है, मन भगवान्‌में लगता है, बुद्धि शुद्ध होती है और जीवन बड़े ही सुखसे कटता है। इसलिये सुबहसे लेकर रातके सोने तक शास्त्रमें बताये हुए आचरणोंका अवश्य ही पालन करना चाहिये।

प्रश्न-अन्तिम या आखिरी धर्म क्या है ?

उत्तर-योगके द्वारा ईश्वरको देखना। अपने मनको भगवान्‌के चरणोंमें जोड़ देनको योग कहते हैं। योग चार प्रकारके होते हैं, यथा-मंत्रयोग, हठयोग, लययोग और राजयोग। भगवान्‌में मन जब डूब जाता है तो बड़ा ही आनन्द अनुभव होने लगता है और संसारके रोग शोक आदि सभी दुःख तब कट जाते हैं।

प्रश्न-ये सब धर्म कहां लिखे गये हैं ?

उत्तर-वेद, स्मृति, पुराण, तन्त्र आदि ऋषियोंके द्वारा प्रकाश किये हुए ग्रन्थों में।

प्रश्न-वेद किसको कहते हैं ?

उत्तर-वेद भगवान्‌का वाक्य है। सृष्टिके प्रारम्भमें भगवान्‌ने जीवोंके उद्धार के लिये जो ज्ञानके वचन कहे थे और जिन वचनोंको तपस्वी ऋषियोंने सुनकर या जानकर अक्षरमें लिख दिया है, उसी को वेद कहते हैं। वेद किसीका बनाया हुआ ग्रन्थ नहीं है, वह भगवान्‌का ही वाक्य है। वेदके चार भाग हैं, यथा-ऋग्, यजुः, साम और अथर्व। वेद के तीन अङ्ग हैं यथा-संहिता, ब्राह्मण और

उपनिषद् । संहितामें उपासनाकाण्ड, ब्राह्मण में कर्मकाण्ड और उपनिषद्में ज्ञानकाण्डका वर्णन है । वेद की ११३१ शाखाएँ हैं, किन्तु अब बहुतसी शाखाएँ नहीं मिलती हैं । कलियुगमें जीवोंके पाप बढ़नेसे ये सब शाखाएँ लुप्त हो गई हैं ।

वेदकी तरह उपवेद भी चार होते हैं, यथा-आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद और स्थापत्यवेद । आयुर्वेदमें चिकित्सा अर्थात् बीमारीमें इलाजके विषय हैं, धनुर्वेदमें युद्धविद्याके विषय हैं, गन्धर्ववेदमें सङ्गीत या गानेके विषय हैं और स्थापत्यवेदमें मकान बनाना, चीजें बनानी, वस्त्र बनाना आदि शिल्पके सभी विषय हैं ।

वेदके अङ्ग और उपाङ्ग भी होते हैं । शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष ये वेदके छः अङ्ग हैं । न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, वेदान्त दर्शनादि सभी वेदके उपाङ्ग कहलाते हैं । इन सभीके ज्ञानके बिना वेद समझमें नहीं आता है । इसलिये वेद पढ़नेके पहले वेदके अंग तथा उपाङ्गोका पाठ अवश्य होना चाहिये । वेदका पाठ तथा वेदमें बताये हुए कर्म्मोंका अनुष्ठान करनेपर मनुष्यको इहलोक तथा परलोकमें सभी प्रकारके सुख प्राप्त होते हैं और अन्त में श्रीभगवान्का दर्शन होता है ।

प्रश्न-स्मृति किसको कहते हैं और कितनी हैं ?

उत्तर-वेदमें भगवान्ने जो आज्ञाकी है, मुनि-ऋषियोंने स्मृतियोंमें उन्हीं आज्ञाओंको स्मरण करके स्पष्ट रूपसे लिखा है और उसी संग्रहको स्मृति कहते हैं । सभी स्मृतियां ऋषि-मुनियों की बनाई हुई हैं । प्रधानस्मृतियों की संख्या २० है । मनु, याज्ञवल्क्य, पराशर, अत्रि, विष्णु, हारीत आदि ये सब ऋषियोंके नाम हैं और इन्हींके नामसे इनकी बनाई हुई ये सब स्मृतियां हैं । इसके सिवाय गोभिल, जमदग्नि, विश्वामित्र आदि ऋषियोंकी बनाई हुई अनेक उपस्मृतियां भी मिलती हैं । आचार, संस्कार, विवाह, वर्णधर्म, आश्रमधर्म, स्त्रीधर्म, पुरुषधर्म, राजधर्म, प्रजाधर्म आदि सभी विषय स्मृतियोंमें मिलते हैं ।

प्रश्न-पुराण किसको कहते हैं और कितने हैं ?

उत्तर-जिन ग्रन्थों में ऋषियोंने वेदके कठिन विषयोंको गाथा, रूपक आदि द्वारा बहुत ही सरल करके बताया है, उन्हें पुराण कहते हैं । पुराणमें वेदके उपदेश

तीन भाषाओंके द्वारा तीन प्रकारसे बताये जाते हैं, यथा-(१) कठिनज्ञान की भाषा द्वारा (२) ध्रुव, प्रह्लाद, हरिश्चन्द्र, भीष्मपितामह आदिके इतिहास द्वारा और (३) किस्सा, कहानी, रूपक आदिके द्वारा। पहली भाषाका नाम समाधिभाषा, दूसरी भाषाका नाम परकीयभाषा और तीसरी भाषाका नाम लौकिकभाषा है। इन तीनों भाषाओंके समझे बिना पुराण ठीक ठीक समझमें नहीं आ सकता है। पुराण पांच प्रकारके होते हैं, यथा-महापुराण, उपपुराण, औपपुराण, इतिहास और पुराणसंहिता। महापुराण अट्ठारह हैं, यथा- ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण, विष्णुपुराण, शिवपुराण इत्यादि। इसके सिवाय वायुपुराण, नृसिंहपुराण, कपिलपुराण आदि उपपुराण भी अठारह होते हैं। इसी प्रकार औपपुराण भी अठारह हैं। इतिहास भी पुराणके अन्तर्गत है। केवल इतिहासमें प्राचीन पुरुषोंकी जीवनी अधिक और पुराणोंमें उपासना, सृष्टि आदिका वृतान्त अधिक होता है। रामायण, महाभारत आदि इतिहास हैं। पुराणसंहिता ऋषियोंके नाम से प्रचलित हैं। पुराण शिक्षाका भण्डार है। इसमें कर्म, भक्ति, ज्ञान, नीति, उपदेश, इतिहास, चिकित्सा, परलोकका रहस्य, आचार, सगुण-निर्गुण-उपासना, अवतार-जीव-ब्रह्म का तत्त्व, सृष्टि-स्थिति-प्रलय आदिकी सभी बातें लिखी गई हैं, जिनके पढ़नेसे मनुष्यको पूर्ण ज्ञानलाभ हो सकता है। कोई कोई अज्ञानी जीव पुराणकी महिमाको न समझ कर पुराणोंकी निन्दा करते हैं, यह उनकी बड़ी भारी भूल है। सभी पुराण श्रीभगवान् वेदव्यासके बनाये हुए हैं। इसलिये जैसे वेद सत्य है, ऐसे पुराण भी सत्य हैं।

प्रश्न-तन्त्र किसको कहते हैं?

उत्तर-पुराणोंकी तरह तन्त्रशास्त्र भी ज्ञानका भण्डार है। तन्त्र तीन प्रकारके होते हैं, यथा-श्रीमहादेवके द्वारा कहे हुए तन्त्र, श्रीमहादेवीके द्वारा कहे हुए तन्त्र और महर्षियोंके बनाये हुए तन्त्र। वे आगमतन्त्र, निगमतन्त्र और आर्षतन्त्र कहलाते हैं। तन्त्रशास्त्रमें वेदके सभी विषय नाना अधिकारियोंके लिये नानाप्रकार से बताये गये हैं। आचार, उपासना, ज्ञान, मन्त्र-हठ-लय आदि योगके विषय, चिकित्सा विद्या, भूतविद्या, रसायन विद्या आदि सभी विद्याएं तन्त्रशास्त्र में भरी पड़ी हैं। इस समयके ज्योतिःशास्त्र और आयुर्वेदका बहुतसा हिस्सा तन्त्रसे ही लिया गया है। तन्त्रके रहस्य कहीं कहीं बड़े गूढ़ हैं, जिनको न समझकर अनेक लोग

तन्त्रशास्त्रकी निन्दा करते हैं, वह उनकी भूल है। समझकर गुरु की सहायतासे इस शास्त्रके पढ़नेपर जीवका कल्याण ही होगा, इसमें सन्देह नहीं है।

प्रश्न- वेद, पुराण आदि सभी शास्त्रोंकी गति किधर है ?

उत्तर-जिस प्रकार सभी नदियोंकी गति समुद्रकी ओर है, उसी प्रकार सभी शास्त्रोंकी गति आनन्दसमुद्र श्रीभगवान्‌की ओर है। भगवान् ज्ञानरूप, आनन्दरूप और सर्वत्र व्याप्त हैं। जिस प्रकार समुद्र जलमें सर्वत्र ही नमक व्याप्त है उसी प्रकार जल, स्थल, वायु, आकाश, जड़, चेतन सर्वत्र ही भगवान् व्याप्त हैं। भगवान सर्वत्र व्याप्त होनेसे निराकार हैं, किन्तु भक्तोंकी प्रार्थनासे साकार रूप धारण करके दर्शन भी देते हैं, जैसा कि भक्त ध्रुव, प्रह्लाद आदिको उनके दर्शन हुए थे। जिस प्रकार अग्निमें लकड़ी आदिके जलानेकी शक्ति है, उसी प्रकार भगवान्‌की भी एक शक्ति है, जिसको प्रकृति या माया कहते हैं। इसी मायाके द्वारा ही परमात्मा, भगवान् या ईश्वर संसारको रचते है, पालते हैं और इसका नाश भी करते हैं। मायामें तीन गुण हैं, यथा-सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण। रजोगुणमें सृष्टि होती है, सत्त्वगुणमें उसका पालन होता है और तमोगुणमें उसका नाश होता है। भगवान् ब्रह्मा बनकर रजोगुणके द्वारा सृष्टि करते हैं, विष्णु बनकर सत्त्वगुणके द्वारा पालन करते हैं और रुद्र बनकर तमोगुणके द्वारा संसारका नाश करते हैं। यह त्रिमूर्त्ति प्रत्येक ब्रह्माण्डमें अलग-अलग होती हैं, किन्तु ईश्वर एक हैं।

प्रश्न-देवता किसको कहते हैं ?

उत्तर-जिस प्रकार जड़ प्रकृतिके चलाने वाले न्‌चेतन भगव: ईश्वर हैं, जो समस्त प्रकृतिमें तीनों गुणोंको घुमाकर संसारकी उत्पत्ति स्थिति लयको कराते हैं, उसी प्रकार प्रकृतिके अलग-अलग विभागके चलानेके लिये बहुतसी चेतन शक्तियां हैं, जिनको देवता कहते हैं। संसारमें देखा जाता है कि कोई भी जड़ वस्तु खुद नहीं काम कर सकती, किन्तु किसी चेतनके द्वारा हिलाये जाने पर हिलती या काम करती है। जड़ टेबल खुद नहीं हिल सकता, चेतन मनुष्यके हिलाने पर हिलता है। जड़ पुस्तक कहींसे कहीं जा नहीं सकती, चेतन मनुष्यके द्वारा लिये जाने पर जा सकती है। इसी प्रकार प्रकृतिमें भी जड़ जल खुद नहीं चल सकता किसी चेतनशक्तिके चालने पर चल सकता है और वर्षा आदि हो सकती है

जड़ वायु खुद नहीं चल सकती किन्तु किसी चेतन शक्तिके द्वारा चलाये जाने पर वर्षामें पूर्वसे, गर्मीमें पश्चिमसे, कभी दक्षिणसे या कभी उत्तरसे बहा करती है। ये जो जल, वायु, अग्नि, मेघ तथा जीवोंके तरह तरहके कर्म आदिकी चलाने वाली चेतना शक्तियां हैं, उनको देवता कहते हैं। जिस प्रकार किसी राज्यके चलानेके लिये राज्यके मालिक राजाकी ही शक्तिको लेकर लाट साहब, गवर्नर, कमिश्नर, मेजिस्ट्रेट, जज, कोतवाल, सिपाही, आदि सब काम करते हैं, उसी प्रकार इस ब्रह्माण्डके चलानेके लिये ब्रह्माण्डके पति श्रीभगवान्की ही शक्ति रूपसे सब देवता काम करते हैं। सब देवताओंमें तीन मुख्य हैं, यथा-ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र। इनके द्वारा ब्रह्माण्डकी सृष्टि, स्थिति और प्रलय होते हैं। इनके नीचे तैंतीस देवता हैं, यथा-आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, इन्द्र और प्रजापति। ये सब लोकपाल कहलाते हैं। इनके नीचे समस्त ब्रह्माण्डके अङ्ग-अङ्गमें व्याप्त तैंतीस करोड़ देवता हैं जिनके द्वारा ब्रह्माण्डका सब कार्य चलता है। यम, वरुण, कुबेर, पवन, अग्नि, अश्विनी कुमार आदि सभी देवता हैं। इन सभीके जिम्मे अलग-अलग काम बँटे हुए हैं। अच्छे बुरे कर्मोंके अनुसार जीवोंको स्वर्ग, नरक, माताके गर्भ आदिमें भेजना, पापीको दण्ड देना, पुण्यात्माको देवलोकमें ले जाना आदि सभी कार्य देवताओं के हैं। जिस प्रकार जीवों को अच्छे मार्ग में लगाना देवताओंका कार्य है, इसी प्रकार जीवोंको बुरे मार्ग में लगाना असुरोंका कर्म है। देवता और असुरोंमें इसलिये सदा लड़ाई रहती है। ब्रह्माण्डके ऊपरके सात लोकोंमें देवताओंका अधिकार है और नीचेके सात लोकोंमें असुरोंका अधिकार है। देवताओंके राजाका नाम इन्द्र है।

प्रश्न-ऋषि और पितर किसको कहते हैं?

उत्तर-ब्रह्माण्ड के सभी कार्य तीन भागों में विभक्त हैं। एक ज्ञानका विस्तार करना, दूसरा कर्मको चलाना तथा कर्मका फल देना और तीसरा ब्रह्माण्ड के स्थूल शरीरकी व्यवस्था ठीक रखना। ऋषिलोग ज्ञानका विस्तार करते हैं, देवतागण कर्मको चलाते हैं और पितृगण ब्रह्माण्डके स्थूल शरीरकी व्यवस्था करते हैं। ग्रीष्म, वर्षा आदि ऋतुओंका ठीक-ठीक होना, ठीक समय पर पानी बरसना, खेतीका होना, देशमें दुर्भिक्ष न होना, बीमारी न होकर देश का स्वास्थ्य ठीक रखना-इत्यादि कर्मका भार पितरों पर है। ऋषि, देवता, पितर सभी देवता

हैं। हमारे पूर्वज मरकर जो पितृलोकमें गये हैं, वे पितर इससे अलग हैं। वे नैमित्तिक पितर कहलाते हैं।

प्रश्न-अवतार किसे कहते हैं ?

उत्तर-जब संसार में कोई असुर या राक्षस पैदा होकर धर्मका नाश, अधर्मकी वृद्धि तथा साधुओंको कष्ट दिया करता है, तब श्री भगवान् साकार रूपसे संसारमें प्रकट होकर उस असुर या राक्षस का नाश करके धर्मरक्षा तथा साधुओंकी रक्षा करते हैं। श्रीभगवान्‌का ऐसा प्रकट होना अवतार कहलाता है। सत्, त्रेता, द्वापर आदि युगोंमें ऐसे अनेक अवतार प्रकट हुए हैं और आगे भी होंगे। उनमें से २४ अवतार मुख्य हैं और उन २४ मेंसे भी दस अवतार मुख्य हैं। उनके नाम-मत्स्यावतार, कूर्मावतार, वराहावतार, नृसिंहावतार, वामनावतार, परशुरामावतार, रामावतार, बलराम-कृष्णावतार, बुद्धावतार और कल्कि अवतार हैं। जिस अवतारमें भगवान्‌की थोड़ी शक्ति प्रकट होती है, वह अंशावतार कहलाता है और जिसमें पूरी शक्ति प्रकट होती है, वह पूर्णावतार कहलाता है। मत्स्य, कूर्म, वामन आदि सभी अंशावतार हैं, केवल श्रीकृष्ण ही पूर्णावतार हैं। श्रीभगवान्‌के अवतारकी तरह देवता तथा ऋषियोंके भी अवतार होते हैं।

प्रश्न- भूत प्रेत किसको कहते हैं ?

उत्तर-देवता तथा असुरोंकी तरह भूत प्रेतकी भी योनी होती है। मनुष्य मरनेके समय यदि मोह, धनलोभ और किसी भावमें मुग्ध होकर मूर्छितकी तरह प्राण छोड़े अथवा बन्दूक, तलवार, वज्राघात या मकानके गिर पड़नेसे अचानक मृत्युहो या आत्मघात से मृत्युहो तो मरने के बाद मनुष्यको प्रेतयोनि मिलती है। प्रेतयोनिमें जीवको बड़ा दु:ख होता है। जिस चीजमें आसक्तिके कारण उनको प्रेत बनना पड़ा था, उस चीजको वह सदा चाहता है, किन्तु न मिलनेसे बड़ा कष्ट होता है। एक ब्रह्माण्डके चौदह भुवनोंमें जैसे देवता असुर आदिका निवास है, प्रेतोंका ऐसा नहीं है। प्रेतलोक हमारे मृत्युलोकके साथ ही मिला हुआ है। मनुष्यके वसतिके साथ ही साथ प्रेतगण वास करते हैं।

प्रश्न-कुल योनियां कितनी हैं ?

उत्तर-योनियां अनन्त हैं। जीवको मनुष्य योनिमें आनेसे पहले ८४ लक्ष जड़

योनियोंमें भटकना पड़ता है । सबसे पहली योनि वृक्षोंकी है, यह उद्‌भिज योनि कहलाती है । इसमें जीवको २० लक्ष बार जन्म लेने पड़ते हैं । उसके बाद ११ लक्ष बार स्वेदज अर्थात् नाना तरहके कीड़ोंकी योनियां जीवको मिलती हैं । उसके बाद १९ लक्ष बार अण्डज योनि अर्थात मछली, मगर, चिड़ियां आदि की योनियोंमें जीवको जाना पड़ता है । उसके बाद ३४ लक्ष बार जीवको पशुयोनिमें घूमना पड़ता है । इस तरहसे ८४ लाख योनियोंमें चक्कर काटकर तब जीवको मनुष्य योनि मिलती है । मनुष्य योनिमें आकर जीव अच्छे बुरे कर्मोंको करता है, जिससे उसको अनेक प्रकारकी ऊँच नीच योनियां मिलती हैं। मनुष्य अच्छा कर्म करते-करते इन्द्र, वरुण, कुबेर आदि देवयोनि, गन्धर्व किन्नर, यक्ष आदि देवयोनि, ऋषियोनि, पितृयोनि सब पा सकता है और मन्द कर्मके द्वारा असुर योनि, राक्षस पिशाचयोनि, भूत-प्रेतयोनि भी पा सकता है । इसलिये मनुष्योंको सदा अच्छा कर्म करना चाहिये । इस प्रकारसे कर्मके अनुसार अनन्त योनियोंकी सृष्टि हुई है ।

प्रश्न-इन सब योनियों के जीव कहां रहते हैं ?

उत्तर-ब्रह्माण्डमें । एक सूर्य और उसके चारों ओर घूमनेवाले तथा उसीसे प्रकाश पाने वाले जितने ग्रह उपग्रह हैं, यह सब मिलकर एक ब्रह्माण्ड या सौरजगत्का स्थूल शरीर बनता है । जिस ब्रह्माण्डमें हम बसते हैं उसमें अब तक करीब तीन सौ ग्रह उपग्रह देखे गये हैं । ग्रह-जैसे पृथ्वी, बुध, वृहस्पति, शनि आदि सूर्यके चारों और घूमते हैं । उपग्रह-जैसे हमारे चन्द्र, पृथ्वी आदि ग्रहोंकी चारों और घूमते हैं । इन सब ग्रह-उपग्रहोंमें मनुष्य, कीट, पतङ्ग, वृक्ष, पशु आदि जीव बसते हैं । इसके सिवाय देवता, असुर, गन्धर्व, प्रेत, पितृ आदि के बसने के लिये सूक्ष्म लोक भी हैं । इस तरहसे स्थूल सूक्ष्म लोकोंको मिलाकर सब समेत एक ब्रह्माण्ड में चौदह लोक होते हैं । उनमेंसे ऊपर के सात लोक यथा-भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक और नीचेके सात लोक यथा-तल, अतल, बितल, सुतल, तलातल, रसातल और पाताल । भूर्लोकिमें रजोगुण अधिक, ऊपरके लोकोंमें देवता बसते हैं, बीचके भूर्लोकमें मनुष्य बसते हैं और नीचे लोकोंमें असुरगण बसते हैं । भूर्लोकके भीतर भी चार लोक हैं, यथा-पृथ्वीलोक जिसमें हम सब बसते हैं, प्रेतलोक जिसमें प्रेतयोनिके

जीव बसते हैं, नरकलोक जिसमें पापियोंको सजाके लिये जाना पड़ता है और पितृलोक जिसमें हमारे मरे हुए पितर बसते हैं। इस प्रकारसे अनन्त योनियोंके जीव सारे ब्रह्माण्ड में बसते हैं। इस सबसे परे तथा सबके भीतर, सबके चलाने वाले, सबके पिता प्रभु श्रीभगवान् बसते हैं।

प्रश्न-उपासना किसको कहते हैं ?

उत्तर-ध्यान, पूजा, पाठ, नाम जप, भक्ति आदिके द्वारा अपने इष्टदेवके पास जानेको उपासना कहते हैं। मनुष्य ध्यान पूजा आदि द्वारा मन ही मन जितना अपने इष्टदेवके पास पहुँचता है, उतनी ही उसपर इष्टदेवकी कृपा होती है। इष्टदेव उसको शक्ति देते हैं, भक्ति देते हैं, ज्ञान देते हैं, उसका पाप नाश करते हैं और अन्तमें अपनेमें मिला ही लेते हैं। यही उपासनाका फल है। इसलिये मनुष्यको नियमसे उपासना अवश्य ही करनी चाहिये। भक्ति उपासनाका प्राण है। जिस प्रकार प्राणके बिना जीव जीवित नहीं रह सकता है, उसी प्रकार बिना भक्तिके उपासना चल नहीं सकती। इसलिये भक्तिके साथ इष्टदेवकी उपासना करनी चाहिये। जिस प्रकार माता-पिता भाई बहिन इष्ट मित्र आदिके प्रति हृदय का प्रेम होता है, उनको देखनेसे आनन्द होता है, न देखने से चित्त घबड़ाता है, ऐसा ही जब इष्टदेव के प्रति हृदयका प्रेम हो, तभी जानना चाहिये कि भक्तिका उदय हुआ। यही भक्ति बढ़ती-बढ़ती जब जीवको इष्टदेवमें मग्न कर देती है तभी इष्टदेवका दर्शन होता है, जिससे जीवका संसार बन्धन टूटता है और वह इष्ट में मिलकर पूर्ण सुखी हो जाता है। इसलिये भक्ति के साथ उपासना अवश्य करनी चाहिये।

प्रश्न-सबसे उत्तम उपासना कौन सी है ?

उत्तर-परमात्माकी उपासना ही सबसे उत्तम है। किन्तु परमात्माके निराकार स्वरूपकी उपासना बहुत कठिन है। इसलिये ऋषियोंने पांच प्रकारके उनके साकार स्वरूपोंकी उपासना बताई है, इसी को सगुण पञ्चोपासना कहते हैं। विष्णु, शिव, शक्ति, गणेश और सूर्य, परमात्मा के ये पांच सगुणरूप हैं। इनकी उपासना करनेसे या इनमेंसे जिसका रूप अच्छा लगे, उसकी उपासना करनेसे ईश्वरकी उपासना होती है। ये पांच मूर्त्तियाँ अलग-अलग देवताओंकी मूर्त्तियाँ नहीं है, किन्तु एक ही परमात्माकी पांच तरहकी मूर्त्तियां है। इसलिये

इनमेंसे किसीकी भी उपासना करनेसे जीव को मोक्ष मिलता है। परमात्माकी तरह परमात्माके अवतारोंकी उपासना द्वारा भी जीवको मोक्ष मिलता है। राम, कृष्ण, आदि परमात्माके अवतार हैं।

प्रश्न-परमात्मा की उपासना कैसे करनी चाहिये ?

उत्तर-विष्णु, शिव, शक्ति आदि जिसमें रूचि हो, हृदयमें उनकी मानसमूर्ति बनाकर या धातु पाषाण आदि द्वारा उनकी स्थूल मूर्ति बनवाकर उसकी पूजा करनी चाहिये। इसीको मूर्ति पूजा कहते हैं। विष्णु, शिव आदिकी जैसी-जैसी मूर्त्तियां महर्षियोंने उनके ध्यानमें बताई हैं ऐसी ही मूर्तियां बनानी चाहिये, उसके बाद वेद आदिके मंत्र, श्रद्धा, पूजा, भक्ति आदिके द्वारा उन मूर्त्तियोंमें ईश्वर की शक्तिको बुलाना चाहिये। उसके बाद मूर्तिकी पूजा करने से बड़ी उन्नति होती है। हमलोग पत्थर, धातु या मिट्टीकी पूजा नहीं करते हैं। किन्तु उनमें भगवानकी शक्ति को बुलाकर उसीकी पूजा करते हैं। मूर्तिपूजा बड़ी अच्छी चीज है। जिस प्रकार अग्निके पास बैठने पर शरीरमें उसकी गर्मी आ जाती है, उसी प्रकार मूर्त्तिके पास बैठकर पूजा करनेसे भगवान्‌की शक्ति, भगवान्‌का ज्ञान, भगवान् का आनन्द सभी भक्तोंको मिल जाते हैं और उस मूर्त्तिमें चित्त स्थिर करके पूजा करते-करते समाधि होती है, जिसमें परमात्माके मधुर दर्शन होते हैं। पूजामें फूल, चन्दन, तुलसी, बिल्वपत्र, दूर्वा, धूप, दीप, नैवेद्य आदि सब भक्तिके साथ भगवान्‌को चढ़ाने चाहिये। और सब जगहसे चित्तको हटाकर मूर्त्तिमें ही एकाग्र करना चाहिये। भगवान्‌का स्तोत्र पाठ करना, नाम जप करना, भजन गाना आदि पूजाके समय सभी करना चाहिये। आसन, प्राणायाम, मुद्रा आदि कुछ-कुछ योगकी क्रिया करनेसे चित्त बड़ा शान्त होता है और भगवान्‌का ध्यान बड़ा ही अच्छा होता है। पांच उपासनाओंकी तरह राम, कृष्ण आदि श्रीभगवान्‌के अवतारोंकी भी उपासना ठीक इसी प्रकारसे होती है। ये सब भगवान्‌के अवतार भगवान् ही है। इसलिये ईश्वर समझकर इनकी उपासना करनेसे भक्तको मुक्ति अवश्य मिलती है।

प्रश्न-मध्यम उपासना कौन सी है ?

उत्तर-ऋषि, देवता और पितरोंकी उपासना मध्यम है। ऋषियोंकी कृपासे हमें ज्ञान मिलता है, देवतागण सुख-सम्पत्तिके देने वाले हैं, पितृगण स्वास्थ्य और

बल देते हैं। इसलिये इनकी पूजा होती है। जो लोग संसारकी सम्पत्ति या परलोकमें सुखयोग चाहते है, वे देवता आदिकी उपासना करते हैं तथा धन चाहने वाले लक्ष्मी देवीकी पूजा करते हैं, शक्ति चाहने वाले इन्द्रदेवकी पूजा करते हैं, विद्या चाहने वाले सरस्वतीकी पूजा करते हैं इत्यादि इत्यादि। इस तरहकी पूजा प्राय: सकाम अर्थात् किसी मतलबोंको लेकर होती है। इसका अन्तिम फल इष्ट देवताके लोकमें जाकर मृत्युके बाद रहना है। इसके सिवाय भूत प्रेतकी जो उपासना है वह अति अधम है। जङ्गली असभ्य लोग प्राय: ऐसी उपासना करते हैं। इसमें अनेक विपत्तियोंकी तथा अवनतिकी आशङ्का रहनेसे ऐसी उपासना न करना ही अच्छा है।

प्रश्न-गृहस्थोंके लिये नित्य करने लायक कर्म कौन से हैं?

उत्तर-सन्ध्या और पञ्चमहायज्ञ। सन्ध्योपासनामें श्रीभगवान्‌की नित्य पूजा होती है, जल, सूर्य, अग्नि, आदि भगवान्‌की अनेक विभूतियोंकी भी उसमें पूजा होती है, जिससे गृहस्थोंको शक्तिलाभ, दीर्घायु लाभ होती है। हम लोग जान कर या न जान कर रोज-रोज अनेक पाप करते हैं। नित्य सन्ध्याकी उपासना द्वारा वे सब पाप कट जाते हैं। प्रात:काल सन्ध्या करनेसे दिनका पाप कटता है। इस तरह पाप क्षय द्वारा पुण्यलाभ और भगवान्‌की ओर चित्तकी गति होती है। इसीलिये सन्ध्या नित्यकर्म है। पञ्चमहायज्ञ में पांच यज्ञ होते हैं, यथा-ऋषि यज्ञ, देव यज्ञ, पितृ यज्ञ, भूत यज्ञ, और नृयज्ञ। हमारे जीवनको उत्तम सुखी तथा पुण्यमय बनानेके लिये पाँच शक्तियाँ सदा सहायता करती हैं। ऋषि लोग हमें ज्ञान देते हैं, जिससे पाप क्या है, पुण्य क्या है, कर्त्तव्य क्या है, अकर्त्तव्य क्या है इत्यादि विचार करके हम अच्छे रास्ते पर चल सकते हैं। देवतागण हमारी रक्षा करते हैं, हमें शक्ति, सुख, सम्पत्ति देते हैं, असुरोंके आक्रमणसे हमें बचाते रहते हैं, हमें सुमति देकर पापसे बचाते हैं, कर्मका ठीक ठीक फल देकर हमें भगवानकी ओर ले जाते हैं। पितृगण हमें स्वास्थ्य और बलवीर्य देते हैं, जिससे हमारा सांसारिक जीवन सुखमय होता है। सभी जीव अपने अपने प्राण देकर हमें पालते हैं, वृक्ष फल देकर, अन्न देकर, कीट पतङ्ग प्राण देकर हमारे प्राण को पुष्ट करते हैं। हमारे खाने-पीने, चलने-फिरनेमें अनेक जीव मरते हैं। मनुष्य हमारे काममें सहायता करके समाजमें हमारे जीवनको सब प्रकारके सुख देते हैं

क्योंकि हम अकेले सब चीजें अपने आरामके लिये नहीं बना सकते । इसलिये इन पांच शक्तियोंके ऋणमें हम बँधे हुए हैं । इनके ऋणसे मुक्त होनेके लिये पञ्च महायज्ञ नित्य करना हमारा अवश्य कर्त्तव्य है । इसीलिये पञ्चमहायज्ञ प्रत्येक गृहस्थका नित्यकर्म है । वेद या शास्त्र पाठ करनेसे ऋषि प्रसन्न होते हैं, अग्निमें हवन करनेसे देवता प्रसन्न होते हैं, पशु पक्षी आदि को अन्न देनेसे भूतोंके ऋण से बचाव होता है और खाने के पहले घर पर आये हुए अतिथिको नारायण समझकर खिलानेसे मनुष्य ऋणसे उद्धार होता है । इसी प्रकारसे नित्य ऋषियज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, भूतयज्ञ और नृयज्ञ होता है, जिससे गृहस्थों का सब पाप कटता है, पांचोंकी प्रसन्नतासे संसारमें सब प्रकारका सुख होता है और भगवान् भी प्रसन्न होकर अपने धाममें जीवको बुलाते हैं ।

प्रश्न-श्राद्ध किसको कहते हैं ?

उत्तर-श्रद्धाके साथ मन्त्र उच्चारण करते हुए शास्त्रीय विधिके अनुसार नित्य पितर, नैमित्तिक पितर तथा प्रेतयोनि प्राप्त अपने आत्मीय कुटुम्बियोंकी तृप्तिके लिये जो क्रियाकी जाती है उसको श्राद्ध कहते हैं । श्राद्धमें दही, तिल, चावल आदि अनेक चीजें दी जाती है जिससे पितरोंकी तृप्ति होती है । श्राद्धमें ऐसी भी विधि है कि नैमित्तिक पितृगण जीवित रहते समय जिन-जिन पदार्थोंको पसन्द करते थे उनके द्वारा भी श्राद्ध किया जाता है । नित्य पितृगण श्राद्धके द्वारा तृप्त होकर संसारमें स्वास्थ्य, बल, वीर्य्य, दान करते हैं । मृत्युके बाद पितृलोक प्राप्त हमारे नैमित्तिक पितृगण श्राद्धके द्वारा तृप्ति, शान्ति तथा उन्नति लाभ करते हैं । श्राद्धके अनुष्ठान ठीक-ठीक होनेसे प्रेतयोनि-प्राप्त जीवका प्रेतत्वनाश होता है । गयामें पिण्डदान तथा श्राद्ध करनेसे प्रेतकी शीघ्र मुक्ति होती है । श्राद्धमें सदाचारी, तपस्वी सद्ब्राह्मणके भोजन करानेकी विधि है । क्योंकि तपस्वी ब्राह्मणोंके संतुष्ट होकर आशीर्वाद करनेसे प्रेतयोनि प्राप्त जीवका कल्याण होता है । हिन्दुशास्त्र इतना उदार है कि इसमें समस्त जीव समस्त भूत, स्वर्गगत, नरकगत सभी प्राणी तथा समस्त संसारकी तृप्तिके लिये श्राद्ध तर्पण करनेकी विधि है । अपने पितर चाहे किसी योनिमें गये हुए क्यों न हों, श्राद्धके द्वारा उनकी तृप्ति, मानसिक शान्ति और आध्यात्मिक उन्नति अवश्य होती है ।

प्रश्न-प्रणाम किस किसको करना चाहिये ?

उत्तर-सबसे प्रथम प्रणाम करने योग्य परमात्मा हैं। उनकी नाना प्रकारकी मूर्तियां मन्दिरोंमें हैं, इसलिये मंदिरोंमें जाकर उनके दर्शन करने चाहिये और उनकी मूर्तियोंके सामने सिर जमीन पर रखकर प्रणाम करना चाहिये। राम, कृष्ण, नृसिंह आदि उनके अवतारोंकी मूर्तियोंको भी उसी भावसे प्रणाम करना चाहिये। देवता पितरोंको भी उसी भावसे प्रणाम करना चाहिये। उनकी भी मूर्तियां प्रणाम करने योग्य हैं। उसके बाद माता, पिता और गुरूजन सब प्रणाम करने योग्य हैं। संसारमें माता पिताके तुल्य पूज्य कोई नहीं है। इसलिये नित्य भक्तिके साथ इनको प्रणाम करना चाहिये। जिनके पास विद्या पढ़ी जाय वे भी प्रणाम करने योग्य हैं। जो हमें भगवान्‌का रास्ता बतावें वे गुरु कहलाते हैं। गुरु सबसे अधिक पूज्यनीय और प्रणाम करने योग्य हैं। बड़े भाई, बड़ी बहिन आदि अपने कुटुम्बमें उमरके बड़े सभीको प्रणाम करना चाहिये। शास्त्रमें उमरके वृद्धों के प्रणामसे आयु, विद्या, यश और बल इन चार चीजों की प्राप्ति बताई है। इसलिये वृद्धोंका सम्मान सदा करना चाहिये। भगवान्‌की विभूति गङ्गा, यमुना आदि नदियाँ, समुद्र, पर्वत, अग्नि, सूर्य, चन्द्र आदिको देखकर भी प्रणाम करना चाहिये। और सकल जीवमें भगवान् व्याप्त हैं ऐसा समझकर सभी जीवोंको मन ही मन प्रणाम करना चाहिये।

प्रश्न-तीर्थ किसको कहते हैं ?

उत्तर-जिस प्रकार मंदिरोंमें मूर्ति स्थापना करके उस मूर्तिमें पूजा, भक्ति आदिके द्वारा भगवान् या देवताकी शक्ति बुलाई जाती है, उसी प्रकार तीर्थोंमें भी मुनि, ऋषि, महात्मागण तपस्या, यज्ञ या उपासना द्वारा भगवान्‌की शक्ति तथा प्रधान प्रधान देवताओंकी शक्तिको प्रकट करते हैं। जैसे आतशी कांचके सहारेसे आकाशमें फैली हुई सूर्य किरणें इकट्ठी होकर अग्नि बन जाती है, ठीक उसी प्रकार भगवान्‌की सब जगह पर फैली हुई शक्ति तीर्थ से प्रकट होकर तीर्थसेवीका कल्याण करती हैं। तीर्थमें जानेसे इन सब शक्तियोंका सहारा हमें मिल सकता है। जिससे हमारा शरीर, मन, बुद्धि सभी उन्नत हो सकते हैं। इसलिये बीच-बीचमें तीर्थोंमें अवश्य जाना चाहिये और वहां जाकर पीठ स्थानोंका दर्शन, महात्माओंका दर्शन, मंदिर, मूर्ति आदिका दर्शन, पूजन,

ध्यान, सत्‌चिन्ता आदि करना चाहिये । भारतवर्षमें अनेक तीर्थ हैं । उनमेंसे काशी, प्रयाग, हरिद्वार, ज्वालामुखी, पुष्कर, विन्ध्याचल, मथुरा, कामाक्ष्या, कुरुक्षेत्र, द्वारका, जगन्नाथपुरी, बदरिकाश्रम आदि बड़े-बड़े तीर्थ हैं । इन सभी स्थानोंमें बड़ी दैवी शक्ति है और अच्छे-अच्छे महात्मा लोग भी वहां पर रहते हैं। प्राचीन कालमें मुनि ऋषियोंने इन सब स्थानों पर बड़ी तपस्या की थी और देवताओंने भी यहां पर यज्ञ किये थे । इस कारण धर्म तथा सात्विक बुद्धिसे इन तीर्थोंका सेवन करने पर शरीर, मन, बुद्धि को बड़ा ही लाभ पहुंचता है और आत्माका भी बल बढ़ता है ।

प्रश्न-क्या गङ्गा, गौमाता आदि भगवान् की विभूतियां हैं ?

उत्तर-अवश्य हैं । इसीलिये इनमें भगवान्‌की विशेष शक्ति है । शास्त्रमें भी कहा गया है कि गङ्गा और गौमातामें सब तीर्थ वास करते हैं । गङ्गा नदीमें और नदियोंसे विशेष शक्ति है । गङ्गाजल वर्षों रखने पर भी कभी सड़ता नहीं है । उसमें हैजा, प्लेग, मलेरिया आदि रोगोंके कीड़े कभी नहीं उत्पन्न होते । यहां तक कि अन्य स्थानोंसे ऐसे कीड़े लाकर गङ्गाजलमें छोड़ देनेसे मर जाते हैं । जिसको देखकर आजकलके सायन्स जानने वाले लोग बड़े ही आश्चर्य तथा चकित हो रहे हैं । इसलिये गङ्गा स्नान करना, गङ्गाजल पीना बड़ा ही उत्तम तथा शरीरको निरोग रखनेवाला है । गङ्गाजल पीनेसे कठिन-कठिन रोग भी आराम हो जाते हैं। गङ्गाजीकी वायु सेवन करनेसे शरीर बड़ा अच्छा रहता है । गङ्गाकी मिट्टी मलनेसे शरीरमें कोई भी चर्मरोग नहीं होने पाता । इन्हीं शक्तियोंके कारण गङ्गा देवी कहलाती हैं । गङ्गा नहाते समय गङ्गा देवीका स्मरण करके स्नान, पूजन तथा प्रणाम करनेसे बड़ा ही पुण्य होता है, सब पाप कटते हैं और मनका सब मल दूर होकर भगवान्‌में अवश्य ही चित्त लगता है ।

गङ्गाकी तरह गौमाता भी देवी हैं । गौमाताके रोम रोममें अनेक देवता बसते हैं । इसलिये गौमाताकी सेवा करनेसे देवता तथा भगवान प्रसन्न होते हैं । गौमाताका दूध बड़ा ही सात्त्विक है । उसके पीनेसे शरीर, मन पवित्र होता है । गौमाताके मूत्र, गोबर आदिमें बड़ी शक्ति है उससे रोगके कीट सब नष्ट हो जाते हैं । बड़े बड़े डाक्टरोंने यह स्पष्ट स्वीकार किया है कि, जितने प्रकारके रोग-कीट नाश करने वाले तथा वायु शुद्ध करने वाले पदार्थ हैं उन सबसे गोबरका

लीपना अधिक हितकारी है, और सहज भी है। जिसकी विष्ठामें यह शक्ति हो, उस गौमताके और गुणोंका क्या कहना है। गौमताके शरीरमें बिजलीकी बड़ी शक्ति है। इसलिये गौमाताके स्पर्शसे, उनकी सेवासे, उनके दूध पीनेसे और घरमें गौ पालनेसे, घरमें रोग बहुत कम होते हैं और सब लोग पवित्र रहते हैं।

प्रश्न-वर्ण किसको कहते हैं ?

उत्तर-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चार वर्ण हैं। जिस प्रकार अपनी रक्षाके लिये चार चीजोंकी आवश्यकता होती है, यथा-अपने आराम तथा रहनेके लिये कला कौशल द्वारा मकान वगैरह बनाना, शरीर रक्षाके लिये धन कमाना, शत्रुसे शरीरको बचानेके लिये बलसञ्चय करना और चित्त बुरे काममें न जाकर भगवान्‌में लगे इसलिये ज्ञान प्राप्त करना, इसी प्रकार समाजकी रक्षा तथा उन्नतिके लिये भी चार वर्णों की आवश्यकता होती है। शूद्रका काम है कि कला कौशल सीखकर मकान बनाना, चीजें बनानी, कपड़ा बनाना आदि द्वारा सबकी सेवा करे, वैश्यका काम है कि वाणिज्य, कृषि आदि द्वारा धन कमा कर समाजको धनी बनावे, क्षत्रियका काम है कि बल पैदा करके शत्रुके आक्रमणसे देश और धर्मकी रक्षा करे और ब्राह्मणका काम है ज्ञानका रास्ता बताकर सभी वर्णोंको आत्मा तथा सच्चे सुख-शान्तिकी ओर ले जावें। यही चार वर्णोंके अलग-अलग कर्त्तव्य हैं। इसलिये चार वार्णोंकी रहन-सहन, खान-पान, विवाह आदि सब अलग-अलग होने चाहिये। कभी सब साथ मिलाकर वर्णोंको भ्रष्ट नहीं करना चाहिये। ऐसा करनेसे कोई वर्ण उन्नति नहीं कर सकेगा, सब मिलकर खिचड़ी सा हो जायेगा और इस प्रकारसे वर्णसङ्कर पैदा होने पर जातिका नाश हो जायेगा, जैसा घोड़ा और गधे से खच्चर बनकर उस जाति का भी नाश हो जाता है। इसलिये हर एक वर्णको अपना-अपना, खान-पान, विवाह वगैरह अलग रखते हुए देश तथा जातिकी सेवाके लिये एकता करनी चाहिये और अपने कर्त्तव्योंका पालन करना चाहिये।

प्रश्न-चार आश्रम कौन-कौन है ?

उत्तर-ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास। संसारमें उत्पन्न होकर भगवान्‌की ओर धीरे-धीरे जाने के लिये ये चार आश्रम बनाये गये हैं। ब्रह्मचर्य्य आश्रममें तप करके शरीर, मनको उन्नत किया जाता है और अच्छी विद्या पढ़कर

आत्माकी उन्नतिकी जाती है। गृहस्थाश्रममें धर्मके साथ संसारको पालकर मनमें से विषय वासना का नाशकर भगवान् की ओर मन को लगाया जाता है। वानप्रस्थ आश्रममें तीर्थ या जंगलमें रहकर खूब तपके द्वारा शरीर, मन, बुद्धिको एकदम शुद्ध कर लिया जाता है। इस प्रकारसे शुद्ध मन परमात्माकी पूजामें एकाग्र हो जाता है। अन्तिभ अर्थात् संन्यास आश्रममें सब कुछ त्यागकर परमात्मामें मन बुद्धिको डुबा देनेसे तथा संसारको भगवान्का रूप समझकर संसारकी सेवामें चित्तके लगानेसे परमात्मा मिल जाते हैं। जिससे जीवका संसार बन्धन कट जाता है। यही चार आश्रमोंका उद्देश्य है।

प्रश्न-आर्य्यजाति किसको कहते हैं?

उत्तर-जो जाति, वर्ण और आश्रमको मानती है, जो जाति अपने खान-पान, रहन-सहन आदि सब बातोंमें ही अपना लक्ष्य आत्माकी ओर रखती है और जिस जातिकी स्त्रियोंमें सतीत्वधर्मका सच्चा आदर्श बना रहता है, वही आर्य्यजाति है। जो वर्ण और आश्रम धर्मको नहीं मानती वह हिन्दूशास्त्रके अनुसार अनार्यजाति कही जाती है। इसलिये जो जाति सभी कार्य आत्माकी उन्नतिके लिये करती है, जिसका आचार खान-पान सब शुद्ध है, जो वर्ण और आश्रमको जन्म कर्म दोनोंसे मानकर उसके नियमोंके अनुसार चलती है, वही आर्यजाति कहलाती है। हम 'आर्य्य या हिन्दु' इसलिये हैं, कि हम वर्णाश्रमके सच्चे मानने वाले हैं, ऋषियोंके बताये हुए सदाचारके नियमोंको पालते हैं और जिससे भगवान् प्रसन्न हों या आत्माकी उन्नति हो ऐसे ही कर्म हम करते हैं।

प्रश्न-हमारा देश कौन है?

उत्तर-भारतवर्ष हमारा देश है। जिस प्रकार एक माता हमारी वह है, जिसने हमें पेटमेंसे पैदा किया है, उसी प्रकार भारत माता भी हमारी माता है। इस माताकी सेवा करना, इसके उद्धारके लिये सदा लगे रहना हमारा बड़ा कर्तव्य है। जो ऐसा नहीं करता वह बड़ा ही नालायक तथा मांका पुत्र कहलाने योग्य नहीं है। कोई-कोई ऐसा कहते हैं कि, हम इस देशके रहने वाले पहलेसे नहीं हैं, हम मध्य एशिया या और किसी दूसरे देशसे आये हैं। यह बात बिलकुल भूल है, हम हमेशासे इसी देशमें बसते हैं, हमारे पितामह तथा आदि पुरुष ऋषिगण इसी देशमें उत्पन्न हुए थे और किसी देशसे नहीं आये थे। हमारे शास्त्रमें इसके

अनेकानेक प्रमाण पाये जाते हैं कि भारतवर्ष ही हमारी आदिभूमि है, सृष्टिके आदिमें आदि सभ्य और आदि धार्मिक लोक यहीं पर उत्पन्न हुए थे और धर्म तथा आत्मज्ञानका पूर्ण विकास यहीं हुआ था और यहीं होगा। इसलिये हमको इसके विरूद्ध बातें कभी नहीं माननी चाहिये। हमको अपनी मांकी भाषा संस्कृत तथा हिन्दी अवश्य पढ़नी चाहिये। और अपने देश की पोशाक अवश्य पहननी चाहिये। देशकी भाषा न सीखनेसे तथा देशकी पोशाक न पहननेसे तथा देशकी बनी हुई चीजोंके प्रति प्रेम न रखनेसे कोई भी देशभक्त नहीं बन सकता। हमारे पूज्य महर्षि लोग बड़े ही देशभक्त थे। हम जब उनकी संतान हैं, तो हमें जन्मभूमि भारतमाताका भक्त होना चाहिये। हमारा विद्या पढ़नेका लक्ष्य नौकरी करके पेट पालना नहीं होना चाहिये, किन्तु स्वतन्त्र रीतिसे कमाये हुए अर्थ द्वारा देशके गरीब भाइयोंका पालन तथा शरीर, मन, प्राण और विद्या, बुद्धि द्वारा जन्मभूमिकी सेवा होना चाहिये। इसके बिना भारतमाताके गोदमें हमारा जन्म लेना ही वृथा है।

प्रश्न-राजा किसको कहते हैं ?

उत्तर-जो अपनी प्रजाको पुत्रकी तरह पाले, उनकी धन, सम्पत्ति, शरीर, प्राण आदिकी रक्षा करे, उनको अच्छे मार्गमें चलानेके लिये पूरा प्रयत्न करे और धर्मका आदर करे वही राजा है। ऐसे राजाके भीतर इन्द्र, यम, कुबेर, वरुण, चन्द्र, सूर्य, अग्नि और पवन इन आठ देवताओंके अंश होते हैं। इन आठोंके अंश होनेसे राजाके भी आठ कर्तव्य होते हैं। यमका अंश होनेसे यमराजकी तरह उनको पक्षपात शून्य सच्चा न्याय करना चाहिय, सूर्यका अंश होनेसे पाप नाश तथा पुण्य का विस्तार करना चाहिये, चन्द्रका अंश होनेसे अपने दयापूर्ण बर्त्तावसे प्रजाको आनन्द देना चाहिये, वरुणका अंश होनेसे धनकी वर्षा करके प्रजाके कष्टोंको दूर करना चाहिये इत्यादि इत्यादि। जो राजा ऐसा करते हैं, समझना चाहिये कि, उनमें आठ देवताओंके अंश मौजूद हैं और उनको मानना प्रजा का कर्त्तव्य है। जो राजा ऐसा नहीं करता है, किन्तु प्रजाको हर तरह से दुःख देता है, उनकी धन सम्पत्तिको लूट खाता है, जानना चाहिये कि, उसमेंसे आठ देवताओंकी शक्ति निकल गयी है और उसमें असुर या राक्षसकी दुष्ट शक्ति आ घुसी है। ऐसा राजा प्रजाको बड़ा ही दुःख देता है और उसी दुःखकी आग

बढ़ती-बढ़ती आपसे आप उस राजाके प्राण, राज्य, कुल, धन सभीको दग्ध कर डालती है, यही शास्त्र का सिद्धान्त है।

प्रश्न-संसार में आकर हमें क्या करना चाहिये ?

उत्तर-संसारमें हमारे दो कर्त्तव्य हैं। एक-जिस देश या जाति के भीतर हम उत्पन्न हुए हैं, उसके प्रति कर्त्तव्य और दूसरा अपने आत्माके प्रति कर्त्तव्य। हमको विद्या पढ़कर इसीके लिये तैयार होना चाहिये कि, हमारे द्वारा परिवारका सुख, जातिका सुख और देशका कल्याण हो सके। हमारे देशका दारिद्रय दुःख दूर हो, हमारे देशमें वाणिज्यकी वृद्धि हो, हमारी जाति राजनैतिक उन्नति करके संसार के सामने मुंह दिखाने लायक बन जाय, इसके लिये जीवन देना हमारा परम कर्त्तव्य है। इसलिये हमारा चरित्र, हमारी शिक्षा, हमारा आचार, हमारा कर्म सभी इसी लायक होना चाहिये। दूसरा-संसारमें आकर यदि आत्माको ही हमने न पहचाना तो मनुष्य जन्म ही वृथा है। क्योंकि पशु पक्षी आदि जन्म में, ज्ञान न होनेसे सब जीव आत्मा या परमात्माको जान नहीं सकते। केवल मनुष्य योनिमें ही जीवको यह शक्ति होती है कि, भगवान्‌का दर्शन करके आत्माका उद्धार कर सके। इसलिये इस मौकेको पाकर नहीं खो देना चाहिये। पिता, माता, गुरुजन, शिक्षक आदि सभीसे हमें ऐसी ही शिक्षा तथा ज्ञान लाभ करना चाहिये, जिससे हमारा चरित्र अच्छा हो मन पवित्र हो, वृद्धि हो और हमारी आत्मा साधन द्वारा उन्नत होकर अन्तमें परमात्मा में मिल जाय। यही मनुष्य जन्मका श्रेष्ठ कर्त्तव्य है।

प्रतिज्ञा-सप्तक ।

(१)

करें प्रतिज्ञा, बालकवृन्दो ! हम सब स्वधर्म सेवेंगे।
धर्म हेतु मर मिटें भले ही, दुर्लभ यश को लेवेंगे ।।
तन-धन-जन समझें हम अपना, कोई काम नहीं आवेगा।
अन्त समयमें एक धर्म ही, सङ्ग हमारे जावेगा ।।

(२)

मातृभूमिके लिये जियेंगे, इसके हित मर जायेंगे।
धर्म हमारा बचा रहे तो मर कर भी तर जायेंगे ।।
वर्णाश्रमको मानेंगे, नहिं रणमें पीठ दिखायेंगे।
खाने को हम नहीं जियेंगे, जीवन हित कुछ खायेंगे ।।

(३)

मात-पिता निजजाति-राष्ट्र-गुरु-सेवा व्रतको पालेंगे।
कहीं रहें या पढ़ें, स्वकुलके शुभ आचार संभालेंगे ।।
ज्ञान-भक्ति-सत्कर्म मार्गसे, कभी नहीं मुख मोड़ेंगे।
न्याय-नीतिसे नहीं हटेंगे, सत्य वचन नहीं छोड़ेंगे ।।

(४)

भारत है यह देश हमारा, आर्य्यपुत्र कहलावेंगे।
साधु संग, सद्ग्रंथ पठन कर, मन अपना बहलावेंगे ।।
ब्रह्मचर्यको धारेंगे, गुरु-शास्त्र-वचनको मानेंगे।
हिंसा द्वेष छोड़ घटघटमें, ईश्वरको पहिचानेंगे ।।

(५)

परवश होकर नहीं रहें, घर अपना देखें भालेंगे।
बनें आत्मवश स्वार्थ त्यागकर, जगत चकित कर डालेंगे ।।
गोरक्षा, कृषि, कला-कुशलता निज व्यवसाय बढ़ावेंगे।
मातृभूमिके चरण कमलमें, निज सर्वस्व चढ़ावेंगे ।।

(६)

आलस तनसे त्यागेंगे, हम उद्यमको अपनावेंगे।
कटुतर वचन कहे यदि कोई, मृदुतर वचन सुनावेंगे ।।
धर्मोद्धारक, देशोद्धारक, जगदुद्धारक होवेंगे।
दीनों को हम सुखी किये बिन, सुखकी नींद न सोवेंगे ।।

(७)

निज-पुरुषार्थ दिखावेंगे, नहिं अशुभ किसीका चाहेंगे।
अपने घर अरि भी यदि आवे, शिष्टाचार निबाहेंगे ।।
ज्ञान-दया-सुविवेक जगाकर, इह-परलोक बनावेंगे।
शील हमारा बना रहे, श्रीहरिसे यही मनायेंगे ।।

सनातन धर्म की पुस्तकें

धर्मकल्पद्रुम

(श्री स्वामी दयानन्द विरचित)

यह हिन्दू धर्मका अद्वितीय और परमावश्यक ग्रन्थ है। हिन्दू जातिकी पुनरुन्नतिके लिये जिन-जिन आवश्यकीय विषयोंकी जरूरत है, उनमेंसे सबसे बड़ी भारी जरूरत एक ऐसे धर्म ग्रन्थकी थी जिसके अध्ययन अध्यापनके द्वारा सनातन धर्मका रहस्य और उसका विस्तृत स्वरूप तथा अङ्ग उपाङ्गोंका यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो सके और साथ-ही-साथ वेद और सब शास्त्रोंका आशय तथा वेदों और सब शास्त्रोंमें कहे हुए विज्ञानोंका यथाक्रम स्वरूप जिज्ञासुको भली-भांति विदित हो सके। इसी गुरुतर अभावको दूर करनेके लिये भारतके प्रसिद्ध धर्मवक्ता और श्री भारतधर्म महामण्डलस्य उपदेशक महाविद्यालयके दर्शनशास्त्रके अध्यापक श्रीमान् स्वामी दयानन्दजी महाराजने इस ग्रन्थका

प्रणयन किया है। इसमें वर्तमान समयके आलोच्य सभी विषय विस्तृत रूप से दिये गये हैं।

प्रवीण दृष्टि में नवीन भारत।

इस ग्रन्थमें आर्य जातिका आदि वासस्थान, उन्नतिका आदर्श निरूपण, शिक्षादर्श, आर्यजीवन, वर्णधर्म आदि विषय वैज्ञानिक युक्ति तथा शास्त्रीय प्रमाणोंके साथ वर्णित हैं।

नवीन दृष्टि में प्रवीण भारत

भारतका प्राचीन गौरव और आर्यजातिका महत्व जाननेके लिए एक ही पुस्तक है।

साधन चन्द्रिका।

यह भी स्कूल पाठ्य सदाचार सम्बन्धीय धर्म पुस्तक है। इसमें प्रातः कालसे लेकर रात्रिमें निद्राके पहले तक क्या-क्या सदाचार किसलिये प्रत्येक भारतीय को अवश्य ही पालने चाहिये इसका रहस्य उत्तम रीतिसे बताया गया है और आधुनिक समयके विचारसे प्रत्येक आचार पालनका वैज्ञानिक कारण भी दिखाया गया है।

नीतिचन्द्रिका।

कोमलमति बालकोंके हृदयों पर नीतितत्व खचित करनेके उद्देश्यसे यह पुस्तिका लिखी गई है। इसमें नीतिकी सब बातें ऐसी सरलतासे समझाई गई है, कि एकके ही पाठसे नीतिशास्त्र ज्ञान हो सकता है।

चरित्रचन्द्रिका।

इस ग्रंथ में पौराणिक, ऐतिहासिक और आधुनिक महापुरुषों का सुन्दर मनोहर विचित्र चरित्र वर्णित हैं।

परलोक-रहस्य ।

मनुष्य मर कर कहां जाता है, उसकी क्या गति होती है इस विषय पर वैज्ञानिक युक्ति तथा शास्त्रीय प्रमाणोंके साथ विस्तृत रूपसे वर्णन है ।

चतुर्दशलोक रहस्य ।

स्वर्ग और नरक कहां और क्या वस्तु है, उनके साथ हमारे इस मृत्युलोकका क्या सम्बन्ध है इत्यादि विषय शास्त्र और युक्तिके साथ वर्णित किये गये हैं आजकल स्वर्ग नरक आदि लोकोंके विषयमें बहुत संशय फैल रहा है । श्रीमान् स्वामी दयानन्द जी महाराजने अपनी स्वाभाविक सरल युक्तियोंके द्वारा चतुर्दश लोकों का रहस्य वर्णन करते हुए उस सन्देह का अच्छा सामाधान किया है ।

सती-चरित्र-चन्द्रिका ।

इस पुस्तक में सीता, सावित्री, गार्गी, मैत्रेयी आदि ४४ सती स्त्रियों के जीवन चरित्र लिखे गये हैं ।

नित्य-कर्म-चन्द्रिका

इस ग्रन्थमें प्रात:कालसे लेकर रात्रिपर्य्यन्त हिन्दुमात्रके अनुष्ठान करने योग्य नित्य कर्म वैदिक तांत्रिक मंत्रोंके साथ भली भांति वर्णित किये गये हैं ।

धर्मसोपान ।

यह धर्मशिक्षा विषयक बड़ी उत्तम पुस्तक है । बालकोंको इसमें धर्मका साधारण ज्ञान भली भांति हो जाता है । यह पुस्तक क्या बालक-बालिका, क्या वृद्ध स्त्री पुरुष, सबके लिये बहुत ही उपकारी है ।

धर्म-कर्म-दीपिका ।

इस पुस्तकमें कर्मका स्वरूप, कर्मके भेद, संस्कारके लक्षण और वेद, वैदिक संस्कारोंका रहस्य, कर्म सम्बन्धसे मुक्ति, रूप, पीठ रहस्य और सदाचार

विज्ञान और महत्त्व प्रतिपादन किया गया है, यह ग्रन्थ मूल और सुस्पष्ट हिन्दी अनुवाद सहित शास्त्रीय प्रमाण देकर छापा गया है, यह ग्रंथ रत्न प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बी के लिये उपादेय है।

सदाचारसोपपान ।

यह पुस्तक कोमलमति बालक बालिकाओंकी धर्मशिक्षाके लिये प्रथम पुस्तक है।

कन्याशिक्षासोपान ।

कोमलमति कन्याओंको धर्मशिक्षा देनेके लिये यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी है।

ब्रह्मचर्यसोपान ।

ब्रह्मचर्य्यव्रतकी शिक्षाके लिये यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी है। सब ब्रह्मचारी आश्रम, पाठशाला और स्कूलोंमें इस ग्रंथकी पढ़ाई होनी चाहिये।

राजशिक्षासोपान ।

राजा महाराजा और उनके कुमारोंको धार्मिक शिक्षा देनेके लिये यह ग्रन्थ बनाया गया है, परन्तु सर्वसाधारणाकी धर्म शिक्षा के लिये भी हम ग्रंथ बहुत ही उपयोगी है, इसमें सनातन धर्मके अङ्ग और उसके तत्त्व अच्छी तरह बताये गये हैं।

साधनसोपान ।

यह पुस्तक उपासना और साधन शैलीकी शिक्षा प्राप्त करनेमें बहुत ही उपयोगी है। यह पुस्तक ऐसी उपकारी है कि, बालक और वृद्ध समानरूप से इससे साधन विषयक शिक्षा लाभ कर सकते हैं।

शास्त्रसोपान ।

सनातन धर्मके शास्त्रोंका संक्षेप सारांश इस ग्रंथमें वर्णित है । सब शास्त्रोंका कुछ विवरण समझनेके लिये प्रत्येक सनातनधर्मावलम्बीके लिये यह ग्रन्थ बहुत ही उपयोगी है ।

मन्त्रयोगसंहिता ।

भाषानुवाद सहित । योग विषयक ऐसा अपूर्व ग्रंथ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ है । इसमें मन्त्रयोग के १६ अङ्ग और क्रमशः उनके लक्षण, साधन प्रणाली आदि सब अच्छी तरह से वर्णन किये गये हैं । इसमें मंत्रोंका स्वरूप उपास्यनिर्णय बहुत अच्छा किया गया है और अनर्थकारी साम्प्रदायिक विरोधके दूर करनेके लिये यह एकमात्र ग्रंथ है, इसमें नास्तिकोंके मूर्ति पूजा, मन्त्र सिद्धि आदि विषयों में जो प्रश्न होते हैं, उनका अच्छा समाधान है ।.

हठयोगसंहिता ।

भाषानुवाद सहित । योगविषयक ऐसा अपूर्व ग्रन्थ आज तक प्रकाशित नहीं हुआ है । इसमें हठयोग के ७ अङ्ग और क्रमशः उनके लक्षण, साधन प्रणाली आदि सब अच्छी तरह से वर्णन किये गये हैं । गुरु और शिष्य दोनों ही इससे पूरा लाभ उठा सकते हैं ।

तत्त्वबोध ।

भाषानुवाद और वैज्ञानिक टिप्पणी सहित । यह मूल वेदान्त ग्रन्थ श्रीशंकराचार्य कृत है ।

स्तोत्रकुसुमाञ्जलि ।

इसमें पञ्चदेवता, अवतार और ब्रह्म की स्तुतियों के साथ आजकल के आश्यकतानुसार धर्मस्तुति, गंगादि पवित्र तीर्थों की स्तुति वेदान्त प्रतिपादक स्तुतियां और काशी के प्रधान देवता श्री विश्वनाथदि की स्तुतियां हैं ।

सप्तगीतायें ।

पञ्चोपासना के अनुसार पांच प्रकार के उपासकों के लिये पांच गीतायें- श्री विष्णुगीता, श्री सूर्यगीता, श्री शक्तिगीता, श्री धीशगीता, और शम्भुगीता और संन्यासियों के लिये संन्यासगीता और साधकों के लिये गुरुगीता भाषानुवाद सहित छप चुकी हैं । इस सातों गीताओं में अनेक दार्शनिक तत्त्व, अनेक उपासना काण्ड के लिये गुरुगीता में अनेक दार्शनिक तत्त्व, अनेक उपासना काण्ड के रहस्य और प्रत्येक उपास्यदेव की उपासना से सम्बन्ध रखने वाले विषय सुचारू रूप से प्रतिपादित किये हैं ।

कर्म्ममीमांसा दर्शन ।

महर्षि भरद्वाजकृत यह दर्शनशास्त्र अनुसन्धान द्वारा प्राप्त हुआ है, जिसका यह प्रथम धर्मपाद प्रकाशित हुआ है । सूत्र, सूत्र का हिन्दी में अर्थ और संस्कृत भाष्य का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार इसको छापा गया है । कर्म के साथ धर्म का सम्बन्ध, धर्म के अङ्गोपाङ्ग, पुरुषधर्म, नारीधर्म, वर्णधर्म, आश्रमधर्म, आपद्धर्म, प्रायश्चित प्रकरण आदि अनेक विषयों का विज्ञान धर्मपाद में वर्णित हुआ है । संस्कार शुद्धि से क्रियाशुद्धि कैसे होती है तथा उसके द्वारा मोक्षप्राप्ति किस प्रकार हो सकती है इत्यादि विषयों का ज्ञान संस्कारपाद क्रियापाद और मोक्षपाद में वर्णित हुआ है । ज्ञानकी सप्त भूमिकाओं के अनुसार पञ्चम भूमिका का यह दर्शन है । इस ग्रन्थरत्न को चार खण्डों में प्रकाशित होना सम्भव है । इसका प्रथम दो भाग प्रकाशित हो गया है ।

श्री गोस्वामी तुलसीदास जी की रामायण ।

श्री गोस्वामी जी के हस्तलिखित पुस्तक के साथ मिलाकर सम्पूर्ण विशुद्ध रूप से छपाया गया है । इसमें कठिन-कठिन शब्दों का अर्थ इस तरह से दिया गया है कि, बिना किसी के सहारा लिये औरतें, बालक, वृद्ध आदि सभी अच्छी तरह कठिन-कठिन भावों को समझ सकते हैं ।

गीतार्थ चन्द्रिका

इसमें भगवद्गीताके श्लोकके प्रत्येक शब्दका हिन्दी अनुवाद, समस्त श्लोकका सरल अर्थ और अन्तमें एक अति मधुर चन्द्रिका द्वारा श्लोक का गूढ़ तात्पर्य बतलाया गया है । इसमें किसीका आश्रय न लेकर ज्ञान, कर्म और उपसना तीनोंका सामञ्जस्य किया गया है । भाषा अति सरल तथा मधुर है । इस ग्रंथ के पाठ करने से गीता के विषय में कुछ जानने को बाकी नहीं रह जाता । हिन्दी भाषा में ऐसी अपूर्व गीता अब तक निकली ही नहीं है ।

पता-
शास्त्र प्रकाशन विभाग
श्री भारत धर्म महामण्डल
महर्षि ज्ञानानन्द मार्ग, लहुराबी
वाराणसी - २२१००१ (भार